

श्रीमद्भगवद्गीता



श्रीमद्भगवद्गीता

योग की परिपूर्णता पर श्री कृष्ण का प्रदीपन



टीकाकार

स्वामी भक्ति गौरव नरसिंह



गौरंगा वाणी पब्लिशर्स

रूपनुग भजन आश्रम,
गौघाट, मदन मोहन घेरा, परिक्रमा मार्ग, वृंदावन, उ.प्र

ईमेल: gauragopala@gmail.com

वेबसाइट: rupanugabhajanashram.com

लेआउट और संपादन

मूल टीका - श्रील भक्ति गौरव नरसिंह महाराज

मूल संस्कृत अनुवाद - स्वामी भक्ति विज्ञान गिरि

लेआउट / कवर डिजाइन - गौरगोपाल दास ।

कलाकृतियां - धीरललिता दासी

वित्तीय योगदानयोगदान

सनातन दास और परमेश्वरी दासी (Sanātana Dāsa & Parameśvarī Dāsī)

योगमाया देवी दासी (Yogamāyā Devī Dāsī)

गणेश बालकृष्णन् (Ganesh Balakrishnan)

रूप रघुनाथ अरण्य (Rūpa Ragunātha Āraṇya)

श्यामसुंदर अरण्य (Śyāmasundara Āraṇya)

राधा गोपीनाथ अरण्य (Rādhā Gopīnātha Āraṇya)

प्रथम संस्करण (२०२२)

Copyright © 2022, Gauranga Vani Publishers
All Rights Reserved.

~ विषय सूची ~

प्राक्थन	७
भूमिका	९
भगवद्गीता का इतिहास	१३
मङ्गलाचरण	१७
अध्याय १ - सैन्य-दर्शन	२७
अध्याय २ - सांख्य योग	४३
अध्याय ३ - कर्म योग	७५
अध्याय ४ - ज्ञान योग	९५
अध्याय ५ – कर्म संन्यास योग	११९
अध्याय ६ – ध्यान योग	१३१
अध्याय ७ – ज्ञान-विज्ञान योग	१४९
अध्याय ८ - तारक-ब्रह्म योग	१६७
अध्याय ९ – राजगृह्य योग	१८३
अध्याय १० – विभूति योग	१९७
अध्याय ११ – विश्वरूपदर्शन योग	२१३
अध्याय १२ – भक्ति योग	२३३
अध्याय १३ – प्रकृति-पुरुष विवेक योग	२४५
अध्याय १४ – गुणत्रय विभाग योग	२६१
अध्याय १५ – पुरुषोत्तम योग	२७३
अध्याय १६ – दैवासुर संपद विभाग योग	२८५
अध्याय १७ – श्रद्धात्रय विभाग योग	२९५
अध्याय १८ – मोक्ष योग	३११
लेखक के बारे में	३४१
उद्घृत श्लोक सूची	३४२
गीता श्लोक सूची	३४४

प्राक्थन

४७

भगवद्गीता का उत्कृष्ट संदेश सभी युगों के लिए सदैव सार्थक है और जीवन के सभी पहलुओं में इसे लागू किया जा सकता है। भगवद्गीता में अस्तित्व के रहस्यों के उत्तर हैं - इस संसार में हमारा वास्तविक उद्देश्य क्या है, हमारा आचरण कैसा होना चाहिए एवं अपने जीवन के इस संघर्ष में हम क्यों दुःखी या अक्सर विवश हो जाते हैं।

भगवद्गीता को समझने के लिए, भक्ति-योग की प्रक्रिया के द्वारा इसके भाव में प्रवेश करना आवश्यक है। तदनुसार, गीता के संदेश को मानसिक परिकल्पनाओं के माध्यम से नहीं समझा जा सकता। अतएव, इसे समझने के लिए, गीता में प्रदीपित उत्कृष्ट प्रक्रिया को वैसे ही अपनाना चाहिए जिस रूप में उसके वक्ता - श्री कृष्ण ने उसे प्रदान किया है।

गीता के संदेश को समझने का सक्रिय सिद्धांत यही है कि उसका श्रवण सीधे योगेश्वर श्री कृष्ण से किया जाना चाहिए, जिन्हें वैदिक शास्त्रों में सर्वत्र परम-पुरुष, परम-सत्य कहकर संबोधित किया गया है। भगवद्गीता में श्री कृष्ण अर्जुन से संवाद करते हैं, इसलिए जो गीता का अध्ययन करते हैं वे सीधे श्री कृष्ण से उसका श्रवण करते हैं।

भगवद्गीता का सिद्धांत एक सच्चे पाठक के लिए स्पष्ट है, लेकिन कुछ लोगों के लिए गीता को समझना चुनौतीपूर्ण होता है, एवं उसकी भाषा उन्हें बहुत प्राचीन प्रतीत होता है। फिर भी, एक सरल व स्पष्ट अनुवाद एवं व्याख्या द्वारा इस रुकावट को आसानी से पार किया जा सकता है। गीता का अनुवाद एवं उस पर भाष्य आज उतना ही आवश्यक है जितना की पहले कभी था। कालांतर में हमारी मान्यताएं एवं वैश्विक नजारिये निरंतर बदलते रहते हैं, इसलिए प्रस्तुत अवस्था में गीता को समझने के लिए एक नए दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

भगवद्गीता का यह अनुवाद और भाष्य एक सरल व प्रगाढ़ ज्ञान प्रदान करता है जो हमें चेतना के एक उच्च स्तर पर ले जाता है, जहां से हम अपने वास्तविक स्वरूप को जान सकते हैं और आध्यात्मिक परिपूर्णता के जीवन की ओर प्रगति करने में सक्षम हो सकते हैं। आत्म साक्षात्कार का अर्थ है, अपने जीवन के वास्तविक उद्देश्य को पूरी तरह पहचानना, और उसकी ओर बढ़ना, जिसके

द्वारा क्रमशः हम भौतिक बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं। जहां प्रकाश होता है, वहां अंधकार नहीं हो सकता, और जहां ज्ञान होता है वहां अज्ञान टिक नहीं सकता। भगवद्गीता न केवल प्रश्नों के ज्ञानपूर्ण उत्तर द्वारा, अपितु यह हमें शुद्ध प्रज्ञा के स्तर पर ऊँचा उठाने की एक प्रगतिशील प्रक्रिया के माध्यम से, जीवन के जटिल रहस्यों को भी सुलझाता है।

गीता की विशेषताओं में एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि पाठक इसके सिद्धांत को अपने दैनिक कार्यों में व्यावहारिक रूप से बिलकुल उसी तरह काम करते हुए देख सकते हैं और इसका अनुभव भी कर सकते हैं, जैसे कि कोई कविता सक्रिय रूप से व्यक्त हो रहा हो। भगवद्गीता का ज्ञान यथार्थ का विज्ञान है - सफलता के लिए उसमें प्रस्तावित समाधान स्पष्ट एवं सक्रिय रूप से मौजूद हैं। इस प्रकार भगवद्गीता हमारे रोजमरा के जीवन के लिए आत्म-साक्षात्कार की एक सम्पूर्ण रूपरेखा प्रदान करता है।

जो भाग्यशाली व्यक्ति भगवद्गीता के ज्ञान की गहराइयों में उतरते हैं एवं उसके उपदेशों को आत्मसाथ करते हैं, वे अवश्य ही सफलता प्राप्त करेंगे, जैसे कि गीता के अंतिम श्लोक में कहा गया है -

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिधुवा नीतिर्मतिर्मम ॥

जहां योगेश्वर श्री कृष्ण हैं, और जहां महान् धनुर्धर अर्जुन हैं, वहां सदैव समृद्धि, विजय, ऐश्वर्य, एवं धार्मिकता होगी - यह मेरा दृढ़ विश्वास है।

- स्वामी भक्तिभावन विष्णु

भूमिका

भगवद्गीता इस संसार में ईश्वरवाद संबंधी विज्ञान का सबसे पुराना एवं सबसे व्यापक रूप से पढ़ा जानेवाला ग्रन्थ है। गीतोपनिषद् के नाम से प्रख्यात भगवद्गीता, पिछले ५,००० वर्षों से भी पूर्व से योग के विषय पर सबसे मुख्य पुस्तक रहा है। वर्तमान समय के अनेक सांसारिक साहित्यों के विपरीत में, भगवद्गीता में किसी भी तरह की कोई भी मानसिक परिकल्पना नहीं है, और यह आत्मा, भक्ति-योग की प्रक्रिया, और परम-सत्य श्री कृष्ण के स्वभाव एवं पहचान के ज्ञान से परिपूर्ण है। इस रूप में, भगवद्गीता दुनिया का सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है, जो प्रज्ञता और प्रबोधन में सभी अन्य ग्रन्थों से ऊँचा है।

भगवद्गीता का पहला शब्द 'धर्म' है। कभी कभी धर्म को गलत रूप से मजहब या मान्यता समझा जाता है, किंतु यह उचित नहीं है। धर्म वह सर्वोत्कृष्ट कर्तव्य या ज्ञान है जो हमारी चेतना को उच्च स्तर की ओर ले जाता है ताकि वह परम-सत्य के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित कर सके। इसे सनातन धर्म भी कहा जाता है, जो सभी जीवों की स्वाभाविक प्रकृती है। भगवद्गीता धर्म शब्द से प्रारंभ होता है - अतः हम शुरुआत से ही समझ सकते हैं कि भगवद्गीता किसी हठधर्मिता या कट्टरपंथी विचारधारा के बारे में नहीं है। वास्तव में, भगवद्गीता परम-सत्य की अनुभूति करने लिए एक सम्पूर्ण विज्ञान है।

एक सावधान व्यक्ति स्पष्ट रूप से देख सकता है कि यह संसार एक भ्रांतिपूर्ण स्थान है जहां अनेक अनसुलझाएं रहस्य उपस्थित हैं। यदि कोई युगों-पुराने प्रश्नों के उत्तर ढूँढ रहे हों जैसे कि "मैं कौन हूँ?", "हम दुःख क्यों भोगते हैं?", "हम कहाँ से आए हैं?", "जीवन का उद्देश्य क्या है?", "मृत्यु के पश्चात क्या होता है?" - तो वे भगवद्गीता के अध्ययन से संतुष्ट होंगे, क्योंकि गीता में इन प्रश्नों के अलावा और भी अन्य प्रश्नों के उत्तर अत्यन्त स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किए गए हैं। ।

सत्य के एक युवा-जिज्ञासु के रूप में, मैं पहली बार १९६८ में भगवद्गीता के संपर्क में आया। तत्पश्चात् के कई वर्षों तक भारत आया और भगवद्गीता की शिक्षा मैंने २० वीं सदी के मुख्य आचार्यों - ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपादजी और स्वामी बी. आर. श्रीधरदेव गोस्वामीजी से प्राप्त की। इन दो महान आचार्यों की

कृपा से भगवद्गीता का मौलिक संदेश मेरे हृदय में समावेशित हो गया, और शीघ्र ही मैंने आत्म-साक्षात्कार के पथ पर चलना प्रारंभ कर दिया।

जीवन के किसी भी पथ पर हम एक चौराहे पर अवश्य पहुंचते हैं। भगवद्गीता के अध्ययन के दौरान मैं जिस चौराहे पर पहले पहुंचा, वह यह था कि क्या मैं व्यक्तित्वपूर्ण परम-सत्य का मार्ग अपनाऊं या निराकारवाद का अनुसरण करूँ। क्या मैं आत्मा की परिशुद्धी से वैकुण्ठ लोक के आध्यात्मिक अंतरिक्ष में प्रवेश कर परम-पुरुष श्री कृष्ण के साथ शाश्वत जीवन बिताऊं या मैं निराकारवाद का अनुसरण करते अपने व्यक्तित्वपूर्ण अस्तित्व को मिटाकर ब्रह्म-ज्योति के परमानन्द में विलीन हो जाऊँ? मैंने प्रथम विकल्प को अपनाया, व्यक्तित्वपूर्ण परम-सत्य का मार्ग (भक्ति-योग)।

भगवद्गीता विशेषकर भक्ति-योग के साधकों के लिए है। बहुत वर्षों से अनेक निराकारवादियों ने गीता पर अधिकार जमाने का प्रयास किया है और कभी यह कहकर की वे ही स्वयं श्री कृष्ण हैं - उनके इस प्रस्ताव का एक सरल तथ्य द्वारा खंडन किया जा सकता है कि अत्यंत स्पष्टता से प्रस्तुत किये जाने के बावजूद, भगवद्गीता में श्री कृष्ण का संदेश उनकी समझ में नहीं आया। श्री कृष्ण भगवद्गीता के वास्तविक वक्ता हैं, अतः उन्हें ही गीता के संदेश की सबसे बेहतर समझ है और श्री कृष्ण अठारहवे अध्याय में यह स्पष्ट करते हैं कि भगवद्गीता के उपदेश अनन्य रूप से केवल उन लोगों के लिए हैं जो परम-सत्य को भक्ति-योग के माध्यम से जानने के इच्छुक हैं।

भगवद्गीता अवश्य एक विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ है, परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि उसके सरल व स्पष्ट उपदेशों को समझने के लिए किसी को विद्वान बनना पड़ेगा। निश्चित ही, अर्जुन, जो भगवद्गीता के पहले छात्र थे, वे कोई विद्वान नहीं बल्कि एक योद्धा थे। भूतकाल में अनेक महान विद्वानों ने, गुरुओं ने, एवं आत्मबोध युक्त ज्ञानियों ने गीता के सहायक के तौर पर ज्ञानवर्धक टिप्पणियां लिखी हैं - जैसे कि, उसका यथार्थ तात्पर्य, उसकी काव्यात्मकता, उसका सिद्धांत, और उसकी गुप्त निधी - जिससे की उनके समय के तथा आगामी पीढ़ियों के लोगों को श्री कृष्ण के उपदेशों की बेहतर समझ हो।

अब हमने २१ वीं सदी के पहले दशक को समाप्त कर लिया है और आज हमारे ग्रन्थालयों में भगवद्गीता की अनेक ऐसी विद्वत्तापूर्ण टिप्पणियां उपस्थित हैं - निश्चित ही, एक और टिप्पणी की अपेक्षा नहीं की जाती!

भगवद्गीता के उपदेश नित्य एवं अपरिवर्तनशील हैं, लेकिन समय, जिससे हम घिरे हुए हैं वह सदैव बदलता रहता है, इसलिए हमारे जीवन का दृष्टिकोण, हमारी प्रस्तुत परिस्थिति, और हमारी आवश्यकताएं सदैव बदलती रहती हैं। इसलिए, इस बदलते काल एवं वर्तमान की आवश्यकताओं के अनुसार एक और टिप्पणी प्रस्तुत की जा रही है - एक संक्षिप्त टिप्पणी, जिसे अनुवृत्ति कहते हैं।

सत्रहवें शताब्दी के विख्यात टीकाकार, श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर के अनुसार गीता के पहले छः अध्याय कर्म से सम्बन्धित हैं, अगले छः अध्याय भक्ति से, और अंत के छः अध्याय ज्ञान से सम्बन्धित हैं। परन्तु जीवन के सबसे जटिल प्रश्नों के उत्तर, गीता के सभी अठारह अध्यायों में सर्वत्र पाए जाते हैं, जिसमें श्री कृष्ण का अर्जुन के लिए अंतिम व निर्णायक उपदेश, आखिरी अध्याय के ६६ वे श्लोक में पाया जाता है - सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

हमारी अनुवृत्ति में हमने श्री कृष्ण द्वारा बताए गए प्रत्येक श्लोक पर व्याख्या नहीं की है क्योंकि हमें यह लगता है कि अपनी बुद्धि-शक्ति के बल पर श्री कृष्ण से सीधे श्रवण करने से व्यक्ति अधिकतम ज्ञान प्राप्त कर सकता है, और इसके आगे किसी व्याख्या की सदैव आवश्यकता नहीं होती। अनुवृत्ति का प्रयोग केवल कुछ पहलुओं पर रोशनी डालने एवं आज के संसार की संबद्धता में कृष्ण के कथन पर चिंतन करने के लिए किया गया है। इस अनुवृत्ति में आप गौड़ीय वैष्णव सिद्धांत (अचिन्त्य-भेदाभेद-तत्त्व) तथा भक्ति-योग की साधना के मुलभूत तत्त्वों पर जानकारी पाएंगे।

कई पाठक भगवद्गीता के ज्ञान पर गहन शोध करना चाहेंगे, और उन पाठकों के लिए हम ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपादजी की “भगवद्गीता यथारूप” (मकिम्लून का १९७३ अंग्रेजी संस्करण - Bhagavad Gita As It Is, का हिन्दी भाषांतर स्वरूप) पुस्तक का अध्ययन करने की अत्यधिक संस्तुति करते हैं। विश्वनाथ चक्रवर्ती, बलदेव विद्याभूषण, भक्तिविनोद ठाकुर, एवं स्वामी बी. आर. श्रीधरदेव गोस्वामीजी द्वारा लिखी गई गीता पर टिप्पणियां, पढ़ने योग्य अन्य अनुशासित रचनाएं हैं।

हम उनके प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करना चाहते हैं, जिन्होंने श्रीमद्भगवद्गीता - योग की परिपूर्णता पर श्री कृष्ण का प्रदीपन पुस्तक की प्रस्तुति को संपन्न करने के लिए हमें प्रोत्साहना एवं अपनी सहायता प्रदान

की है। इस संबंध में हम अपने गुरुभाइयों, स्वामी भक्तिभावन विष्णु, जयदेव, जगदीश्वर, हमारी गुरुबहन धीर-ललिता, तथा हमारे संन्यासी शिष्यों, स्वामी भक्तिविज्ञान गिरि एवं हरिदास बाबाजी महाराज का विशेष रूप से जिक्र करना चाहते हैं।

हम प्रार्थना करते हैं कि यह प्रकाशन परम-सत्य श्री कृष्ण पर अर्पण के रूप में स्वीकृत हो - श्रीकृष्णार्पणमस्तु।

स्वामी भक्तिगौरव नरसिंह

अगस्त २२, २०११

श्री कृष्ण जन्माष्टमी

गौराब्द ५२६

भगवद्गीता का इतिहास

१०७

अनादिकाल से भगवद्गीता पूर्व और पश्चिम दोनों के अनेक महान विचारकों तथा दार्शनिकों के लिए प्रेरणा का प्रधान स्रोत रहा है। बीते समय में, गीता पर पहला भाष्य आदि शंकराचार्य ने लिखा था, जो वे पहले आचार्य थे जिन्होंने गीता को एक पृथक ग्रन्थ के रूप में स्वीकार किया। तत्पश्चात्, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, श्रीधर स्वामी आदि जैसे महान आचार्यों ने गीता पर भाष्य लिखे, जिससे आदि शंकराचार्य के निराकार अर्थ प्रकाशन के बिलकुल विपरीत, गीता का मूलभूत भक्तिपरक अभिप्राय व्यक्त हुआ।

पश्चिमी देशों में भगवद्गीता की अत्यधिक प्रशंसा, विद्वान व्यक्तियों तथा दार्शनिकों, जैसे कि हेनरि डेविड थरौ, फ्रेड्रिच फन शीगल, आर्थर शोपेनहौवर, कार्ल जंग, एवं हर्मन हेस्सा ने की है। गीता को पढ़ने के बाद, विख्यात अमरीकी ट्रैन्सेन्डेन्टलिस्ट रेल्फ वाल्डो एमर्सन ने कहा -

मैंने भगवद्गीता द्वारा एक शानदार दिन पाया। वह सबसे पहले प्रस्तुत किताबों में से एक है; इसे पढ़ते ऐसा लगता है जैसे कि एक साम्राज्य ही हमसे बात कर रहा हो, कुछ भी छोटा या अयोग्य नहीं, सब कुछ बृहत्, प्रशांत, सुसंगत, एक प्राचीन प्रज्ञा की वाणी जिसने किसी दूसरे युग और वातावरण में चिंतन के माध्यम से उन्हीं प्रश्नों को निपटा लिया है, जिन प्रश्नों से आज हम जूझ रहे हैं। (जर्नल्स आफ रेल्फ वाल्डो एमर्सन)

मूलतः भगवद्गीता एक प्राचीन ऐतिहासिक महाकाव्य - महाभारत का अंश है, जिसकी रचना लगभग ३१०० ईसा पूर्व में महामुनी व्यास ने की थी। भगवद्गीता के अठारह अध्याय, महाभारत के भीष्म-पर्व नामक छठे काण्ड का अंश है, जिसमें कुल मिलाकर ११७ अध्याय हैं। प्रारंभ में व्यासजी ने महाभारत के ८,८०० मूल श्लोकों को लिखा, तत्पश्चात् उनके शिष्य वैशम्पायन एवं सूत ने और भी ऐतिहासिक जानकारी उसमें शामिल की, जिससे अंत में महाभारत में १,००,००० श्लोक हुए - होमर के इलियड (Iliad) से सात गुना बड़ा और किंग जैम्स बैबल से पंद्रह गुना बड़ा।

महाभारत का अर्थ है “बृहत भारत का इतिहास” जो दो झगड़ते राज परिवारों, पाण्डवों (पाण्डु के पुत्रों) और कौरवों (धृतराष्ट्र के पुत्रों) की कथा सुनाती है। पाण्डु और उनके भाई धृतराष्ट्र दोनों हस्तिनापुर के (आधुनिक समय की दिल्ली) कुरु राज-वंश के वंशज थे। हालांकि धृतराष्ट्र ज्येष्ठ थे, वे जन्म से अंधे थे, और इसलिए पाण्डु को राज-सिंहासन सौंपा गया, जिससे वे उसके उत्तराधिकारी बन गए।

यद्यपि महाराज पाण्डु की असामयिक मृत्यु हो गई, और वे अपने पांच पुत्रों को छोड़ गए - युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव। जब पाण्डव अल्पवयस्क थे, उनके चाचा धृतराष्ट्र ने उनके प्रतिनिधि के तौर पर तब तक राज-सिंहासन ग्रहण करने का निश्चय किया, जब तक की वे राज्य सम्भालने के योग्य न बन जाएं। लेकिन उनके अपने पुत्रों के प्रति अत्यधिक मोह के कारण, धृतराष्ट्र ने कपट प्रबंध किया जिससे की दुर्योधन के नेतृत्व में उनके अपने पुत्र राज-सिंहासन के उत्तराधिकारी बन जाएं। इस परिणाम को पाने के लिए, अपने पिता की अनुमति सहित, दुर्योधन ने पाण्डवों की हत्या करने के लिए अनेक प्रयास किए। पितामह भीष्म, चाचा विदुर, और शत्रुघ्नु द्वाण के बुद्धिपूर्ण मंत्रणा के बावजूद दुर्योधन ने अपने चचरे भाइयों के विरुद्ध घड़यंत्र रचना जारी रखा। फिर भी, श्री कृष्ण की छत्रछाया में रहकर पाण्डव ने उसके सभी जानलेवा घड़यंत्रों को विफल बना दिया।

ऐतिहासिक तौर पर, श्री कृष्ण पाण्डु की पत्नी, रानी कुन्ती के भतीजे थे, और इस हिसाब से वे पाण्डवों के ममेरे भाई थे। परन्तु कृष्ण केवल एक युवराज नहीं बल्कि स्वयं परम-पुरुष भगवान् थे, जो पृथ्वी पर अपनी लीलाएं रचने एवं धर्म की स्थापना करने हेतु अवतीर्ण हुए थे। उनकी धर्मनिष्ठता के कारण पाण्डव सदैव कृष्ण के कृपापात्र थे।

अनेक जानलेवा प्रयासों के पश्चात्, अंत में दुर्योधन पाण्डवों को खोटे पांसों के खेल की चुनौति देते हैं। दुर्योधन कपट से खेल जीत जाते हैं, और पाण्डव अपना राज्य खो बैठते हैं। परिणाम स्वरूप पाण्डवों को बलपूर्वक तेरह वर्षों के वनवास पर भेज दिया जाता है।

अपने तेरह वर्षों के वनवास की समाप्ति के पश्चात्, पाण्डव अपनी राजधानी में लौट आते हैं और दुर्योधन से अपना राज्य वापस करने का अनुरोध करते हैं। जब घमंडी दुर्योधन उन्हें साफ़ मना कर देते हैं, तब वे उनसे कम से कम पांच

गाँवों का राज्याधिकार मांगते हैं। इस पर दुर्योधन बेरुखी से जवाब देते हैं कि वे उन्हें एक सूई घुसाने के बराबर भी भूमी नहीं देंगे।

हालांकि पाण्डव, श्री कृष्ण को दूत बनाकर उन्हें दुर्योधन से सन्धि करने के लिए भेजते हैं, फिर भी दुर्योधन उनकी एक नहीं सुनता। अतः युद्ध अब अनिवार्य हो चुका था।

पश्चिम में सीरिया से लेकर पूर्व में चीन तक के शासक इस युद्ध में भाग लेने आए - अपनी राजनीतिक योजनाओं के अनुसार कुछ कौरवों के पक्ष में रहे, तो कुछ पाण्डवों की धार्मिकता के कारण वे पाण्डवों के पक्ष में रहे। इस भ्रातृघातक युद्ध के दौरान कृष्ण कहते हैं की वे किसी भी पक्ष के लिए शास्त्र नहीं उठाएंगे, लेकिन वे अर्जुन के लिए उनके सारथी का पद स्वीकार करते हैं। तब, ३१३८ इसा पूर्व वर्ष के दिसम्बर के मास में दोनों सेनाएं, कुरुक्षेत्र के पवित्र स्थान पर एकत्रित हुईं।

वामन-पुराण में कुरुक्षेत्र के महत्त्व का वर्णन है जिसमें कहा गया है कि कैसे पाण्डव और कौरव वंश के पैतृक कुलपति, धर्मपरायण राजा कुरु ने कुरुक्षेत्र में घोर तपस्याएं की थी। इस कार्य के लिए, कुरु को दो वरदान दिए गए थे - पहला वर यह था कि उस क्षेत्र का नाम कुरु के नाम पर रखा जाएगा, और दूसरा यह कि जो कोई भी कुरुक्षेत्र में देहत्याग करेगा उसे स्वर्ग की प्राप्ति होगी।

भगवद्गीता का प्रवचन कुरुक्षेत्र में युद्ध के पहले दिन हुआ था। जब दोनों सेनाएं युद्ध के लिए तैयार होती हैं, दृष्टिहीन धृतराष्ट्र अपने राजदरबार में अपने वफादार सेवक संजय के साथ बैठते हैं, और उनसे प्रश्न करते हैं कि धर्मनिष्ठ पाण्डव क्या कर रहे हैं। महामुनी व्यास के शिष्य संजय को दिव्य-दृष्टि का सौभाग्य प्राप्त था जिससे कि वे, रणभूमि से दूर, हस्तिनापुर में बैठकर ही युद्ध को देख सकते थे। संजय फिर वृद्ध राजा को श्री कृष्ण और अर्जुन के बीच हुए पावन वार्तालाप को सुनाते हैं। इस प्रकार भगवद्गीता को संजय ने सुना और मानवजाति की आध्यात्मिक भलाई के लिए उसे धृतराष्ट्र को दोहराया।

स्वामी भक्तिविज्ञान गिरि

मङ्गलाचरण

ॐ अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥

मैं अपने आध्यात्मिक गुरुदेव को नमन करता हूँ जिन्होंने मेरी अज्ञान से आवृत अंधी आँखों को, ज्ञान के दीपक से प्रकाशित किया है।

श्रीचैतन्य मनोऽभिष्ठ स्थापितं येन भूतले ।
स्वयं रूपः कदा मह्यं ददाति स्वपदान्तिकम् ॥

श्रील रूप गोस्वामी, जिन्होंने इस धरती पर श्री चैतन्य महाप्रभु की मनोकामना पूरी करने के ध्येय की स्थापना की है, वे कब मुझे अपने पदकमलों में आश्रय प्रदान करेंगे?

वन्देऽहं श्रीगुरोः श्रीयुतपद्कमलं श्रीगुरुन् वैष्णवांश्च ।
श्रीरूपं सायंजातं सहगण रघुनाथान्वितं तं सजीवम् ॥
साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं कृष्णचैतन्यदेवं ।
श्रीराधाकृष्णपादान् सहगण ललिता श्रीविशाखान्वितांश्च ॥

मैं अपने अध्यात्मिक गुरु एवं भक्तिपूर्ण सेवा के पथ पर अन्य सभी गुरुओं के पदकमलों पर सादर नमन अर्पित करता हूँ। मैं सभी वैष्णवों को एवं श्रील रूप गोस्वामी, श्रील सनातन गोस्वामी समेत, श्रील रघुनाथदास गोस्वामी, श्रील जीव गोस्वामी तथा उनके परिकर-जनों को सादर नमन करता हूँ। मैं श्री अद्वैताचार्य, श्री नित्यानन्द प्रभु, श्री चैतन्य महाप्रभु तथा श्रीवास ठाकुर के नेतृत्व में उनके सभी भक्तों को सादर नमन करता हूँ। फिर मैं श्री कृष्ण, श्रीमती राधारानी, और ललिता विशाखा के नेतृत्व में सभी गोपियों को सादर नमन करता हूँ।

नामश्रेष्ठं मनुमपि शचीपुत्रमत्र स्वरूपं ।
रूपं तस्याग्रजमुरुपुरी माथुरी गोष्टवाटीम् ॥
राधाकुण्डं गिरिवरमहो राधिकामाधवाशां ।
प्राप्तो यस्य प्रथितकृपया श्रीगुरुं तं नतोऽस्मि ॥

मैं अपने अध्यात्मिक गुरु के पदकमलों पर नमन करता हूँ, जिनकी कृपा से मैंने श्री कृष्ण का परम नाम प्राप्त किया, शचीपुत्र श्रीमन महाप्रभु की सेवा प्राप्त की, श्री स्वरूप दामोदर, श्रील रूप गोस्वामी और उनके अग्रज श्रील सनातन गोस्वामी, मथुरा का परम धाम, वृन्दावन का आनन्दमय धाम, दिव्य राधाकुण्ड, पर्वतराज गोवर्धन की संगत प्राप्त की, एवं अपने हृदय में श्रीश्री राधाकृष्ण की प्रेमपूर्वक सेवा करने की आकांक्षा प्राप्त की।

नमः ॐ विष्णुपादाय कृष्णप्रेष्टाय भूतले।
स्वामी श्रीभक्तिवेदान्तं प्रभुपादाय ते नमः ॥

गुरुवाङ्मय शिरसिधार्य शक्तयावेश स्वरूपिने ।
हरे कृष्णोतिमन्त्रेन पाश्चात्यप्राच्य तारिणे ॥

विश्वाचार्यं प्रवर्याय दिव्यं कारुण्यमूर्तये ।
श्रीभागवतमाधुर्यं गीताङ्गानं प्रदायिने ।

गौरं श्रीरूपं सिद्धान्तं सरस्वतीं निशेविने ।
राधाकृष्णपदाम्भोजभूज्ञाय गुरवे नमः ॥

मैं श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद को सादर नमन करता हूँ, जिन्होंने श्री कृष्ण के पदकमलों का आश्रय लिया है, एवं जो श्री कृष्ण के अत्यंत प्रिय हैं।

अपने गुरु की आज्ञा को अपने शीर्ष पर धारण कर, वे श्री नित्यानन्द प्रभु द्वारा सशक्त हुए, और पश्चिमी देशों में सर्वत्र श्री कृष्ण के पावन नाम के प्रचार द्वारा उन्होंने सभी पतित जीवों का उद्धार एवं मोक्षन किया।

वे करोड़ो जगद्गुरुओं में श्रेष्ठ हैं, क्योंकि वे दिव्य कृपा के साक्षात् स्वरूप हैं। उन्होंने श्रीमद्भागवतम् का मधुर अमृत एवं भगवदीता का दिव्य ज्ञान का प्रचार किया।

वे निरंतर अपने गुरु श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर, श्रील रूप गोस्वामी, एवं श्री चैतन्य महाप्रभु की अनन्य सेवा में निमग्न हैं। मैं श्रील प्रभुपाद को अपना विनम्र दण्डवत प्रणाम अर्पित करता हूँ जो श्रीश्री राधा-गोविन्द के पदकमलों के अमृत का आस्वादन करनेवाले एक भौंरे की भाँति हैं।

वैराग्यविद्या निजभक्तियोग।
 अपाययां मामनविष्यमन्धम् ॥
 श्री श्रीधर भक्तिरक्षक नाम ।
 कृपाम्बुधिर्यस तामहं प्रपद्ये ॥

मैं श्रील भक्तिरक्षक श्रीधरदेव गोस्वामीपाद पर आत्मसमर्पण करता हूँ जो एक कृपासिंधु हैं। यद्यपि मैं नेत्रहीन एवं अज्ञान के अंधकार में था, उन्होंने मुझे दिव्य ज्ञान का प्रकाश प्रदान किया। उन्होंने मुझे वैराग्य के सच्चे तात्पर्य की शिक्षा दी एवं दिव्यप्रेम के सर्वोच्च अमृत का मुझे आस्वादन कराया।

वाञ्छाकल्पतरुभ्यस्त्वं कृपासिन्धुभ्य एव च ।
 पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः ॥

मैं वैष्णवों के समक्ष नमन करता हूँ, जो कल्पवृक्ष एवं कृपासिंधु की भाँति हैं, क्योंकि वे पतित जीवों को भौतिक अस्तित्व से मुक्ति प्रदान करते हैं।

वन्दे श्री कृष्ण चैतन्य नित्यानन्दौ सहोदितौ ।
 गौडोदये पुष्पवन्तौ चित्रौ शन्दौ तमोनुदौ ॥

मैं श्री कृष्णचैतन्य महाप्रभु एवं श्री नित्यानन्द प्रभु को सादर नमन करता हूँ जो सूर्य-चन्द्रमा की भाँति हैं। गौडदेश में एकसाथ उदय होकर वे अज्ञान के अंधकार का विनाश करते हैं एवं सब पर अपने अद्भुत आशीर्वाद को न्योछावर करते हैं।

नमो महावदान्याय कृष्णप्रेमप्रदाय ते ।
 कृष्णाय कृष्णचैतन्य नामने गौरत्विषे नमः ॥

मैं श्री कृष्ण को अपना अत्यंत विनयपूर्ण नमन अर्पित करता हूँ, जो कृष्णप्रेम का वितरण करने हेतु अपने सबसे कृपापूर्ण सुवर्ण स्वरूप में पधारे हैं।

श्री ह्लादिनी स्वरूपाय गौराङ्ग सुहृदाय च ।
 भक्तशक्तिप्रदानाय गदाधर नमोऽस्तु ते ॥

मैं श्री गदाधर पण्डित को अपना नमन अर्पित करता हूँ, जो ह्लादिनी शक्ति के साक्षात स्वरूप हैं, जो श्री चैतन्य महाप्रभू के सबसे प्रिय संगी हैं, और जो भक्तों के आध्यत्मिक बल के प्रदाता हैं।

**पञ्चतत्त्वात्मकं कृष्णं भक्तरूपस्वरूपकम् ।
भक्तावतारं भक्ताख्यं नमामि भक्तशक्तिकम् ॥**

मैं श्री कृष्ण को अपना सादर नमन अर्पित करता हूँ जो अपने पहलुओं - भक्तरूप, भक्तावतार, भक्त अभिव्यक्ति, शुद्ध भक्त, एवं भक्ति शक्ति से अभिन्न हैं।

**हे कृष्ण करुणासिन्धो दीनबन्धो जगत्पते ।
गोपेश गोपिकाकान्त राधाकान्त नमोऽस्तुते ॥**

हे कृष्ण, आप कृपासिंधु हो। आप दीनबन्धु एवं जग के स्वामी हो। आप गोपालकों के स्वामी हो, गोपियों के प्रेमी हो, और श्रीमती राधारानी के प्रिय हो। मैं आपको अपना सादर नमन अर्पित करता हूँ।

**जयतां सुरतौ पङ्कोर् मम मन्दमतेर्गति ।
मत्सर्वस्वपदाभ्योजौ राधामदनमोहनौ ॥**

श्रीश्री राधा-मदनमोहन की जय हो। मैं शक्तिहीन एवं मन्दमति हूँ, फिर भी आपके पदकमल ही मेरे लिए सबकुछ हैं।

**दिव्यद्वृन्दारण्य कल्पद्रुमादः ।
श्रीमद्रनागार सिंहासनस्थौ ॥
श्रीमद राधा श्रील गोविन्ददेवौ ।
प्रेषालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि ॥**

रत्नों से सुसज्जित मंदिर में, वृन्दावन के कानन में, कल्पवृक्ष के नीचे, श्रीश्री राधा-गोविन्द एक रत्नसिंहासन पर विराजमान हैं, और अपने सबसे निजी परिकरों से सेवित हैं। मैं उनको अपना सादर नमन अर्पित करता हूँ।

**श्रीमन् रासरसारम्भी वंशीवटतटस्थितः ।
कर्षन् वेणुस्वनैर् गोपीर् गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः ॥**

श्री गोपीनाथ जिन्होंने दिव्य रासलीला रची, अपनी बांसुरी की मधुर ध्वनी से गोपियों के मन को आकर्षित करते हुए, वे वंशीवट के तट पर खड़े हैं। मेरी प्रार्थना है कि श्रीश्री राधा-गोपीनाथ हमपर अपनी कृपा की बौछार करें।

तसकाञ्चनगौराङ्गी राधे वृन्दावनेश्वरी ।
वृषभानुसुते देवी प्रणमामि हरिप्रिये ॥

मैं श्रीमती राधारानी को अपना सादर नमन अर्पित करता हूँ, जिनकी अंगज्योति तरल-स्वर्ण की भाँति हैं। वे वृन्दावन की महारानी हैं, राजा वृषभानु की सुपुत्रि हैं, और श्री कृष्ण को सबसे प्रिय हैं।

वृन्दायै तुलसीदेव्यै प्रियायै केशवस्य च ।
विष्णुभक्तिप्रदे देवी सत्यवत्यै नमो नमः ॥

मैं पुनःपुनः श्री वृन्दा, तुलसी देवी को अपन नमन अर्पित करता हूँ, जो श्री केशव (कृष्ण) को बहुत प्रिय हैं। हे देवी, आप कृष्णभक्ति की प्रदाता हो, और परम सत्य के धारक हो।

उग्रं वीरं महाविष्णुं।
ज्वलन्तं सर्वतोमुखं ॥
नृसिंह भीषणं भद्रं ।
मृत्युमृत्युम् नमाम्यहम् ॥

मैं श्री नृसिंहदेव को अपना सादर नमन अर्पित करता हूँ, जो उग्र हैं, वीर हैं, और महाविष्णु से अभिन्न हैं। वे प्रज्वलित हैं, और उनका मुख सभि दिशाओं में व्याप्त है। वे अर्ध-मानव, अर्ध-सिंह अवतार हैं जो अत्यंत भयंकर हैं। वे सबसे मंगलमय हैं एवं मृत्यु के भी मृत्यु हैं।

जय श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु नित्यानन्द
जय अद्वैत गदाधर श्रीवासादि गौरभक्तवृन्द

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे



श्री गुरु परम्परा

३०६

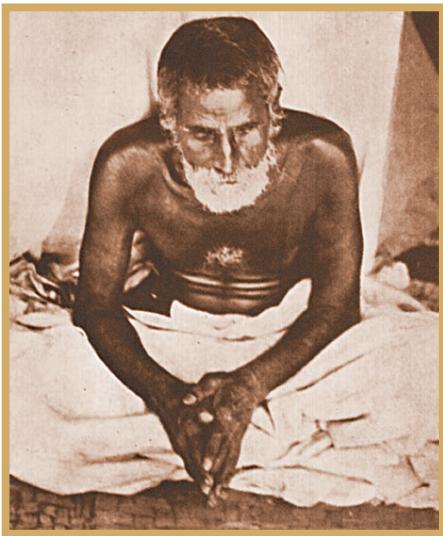
- | | |
|-----------------------|--|
| १. श्री कृष्ण | २०. माधवेन्द्र पूरी |
| २. ब्रह्मा | २१. ईश्वर पूरी |
| ३. नारद | २२. श्री चैतन्य महाप्रभु |
| ४. व्यास | २३. रूप गोस्वामी (सनातन
गोस्वामी, रघुनाथदास गोस्वामी) |
| ५. मध्वाचार्य | २४. कृष्णदास कविराज गोस्वामी |
| ६. पद्मनाभ तीर्थ | २५. नरोत्तमदास ठाकुर |
| ७. नरहरि तीर्थ | २६. विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर |
| ८. माधव तीर्थ | २७. बलदेव विद्याभूषण |
| ९. अक्षोभ्य तीर्थ | २८. जगन्नाथदास बाबाजी |
| १०. जय तीर्थ | २९. भक्तिविनोद ठाकुर |
| ११. ज्ञानसिन्धु तीर्थ | ३०. गौरकिशोर दास बाबाजी |
| १२. दयानिधि तीर्थ | ३१. भक्तिसिद्धान्त सरस्वती
ठाकुर |
| १३. विद्यानिधि तीर्थ | ३२. ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी
प्रभुपाद |
| १४. राजेन्द्र तीर्थ | भक्ति रक्षक श्रीधरदेव गोस्वामी |
| १५. जयधर्म तीर्थ | भक्ति प्रमोद पूरी गोस्वामी |
| १६. पुरुषोत्तम तीर्थ | ३३. स्वामी भक्ति गौरव नरसिंह |
| १७. ब्रह्मण्य तीर्थ | |
| १८. व्यास तीर्थ | |
| १९. लक्ष्मीपति तीर्थ | |



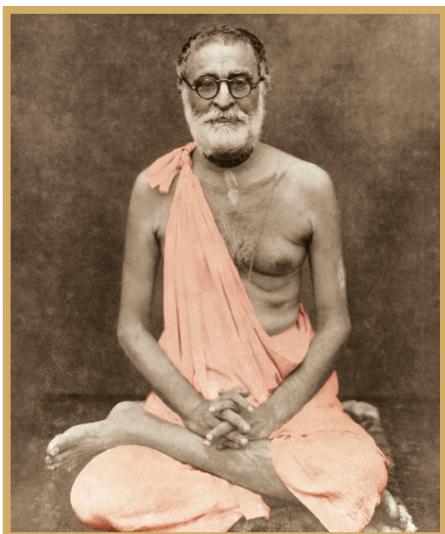
४३ श्रील भक्ति गौरव नरसिंह महाराज ५१



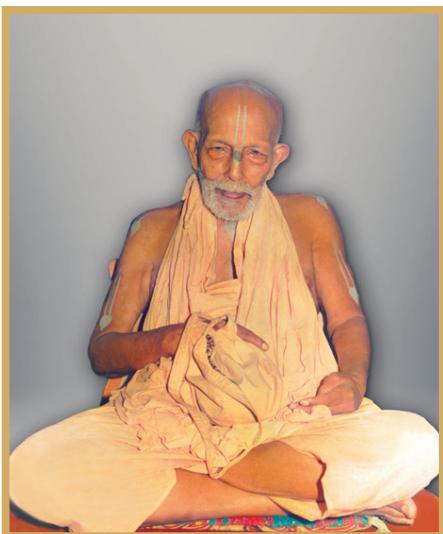
श्रील भक्तिविनोद ठाकुर



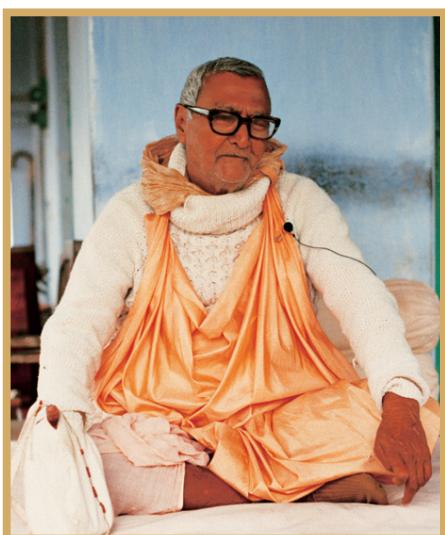
श्रील गौरकिशोर दास बाबाजी महाराज



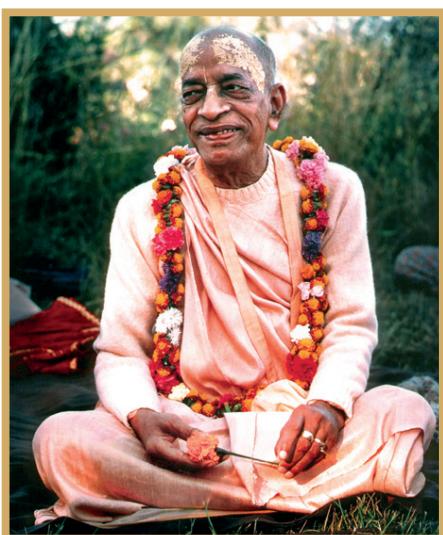
श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद



श्रील भक्ति प्रमोद पुरी महाराज



श्रील भक्तिरक्षक श्रीधरदेव गोस्वामी महाराज



श्रील ए.सी. भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद



५३

श्री श्री गान्धर्विका गोविन्दसुन्दर

५४